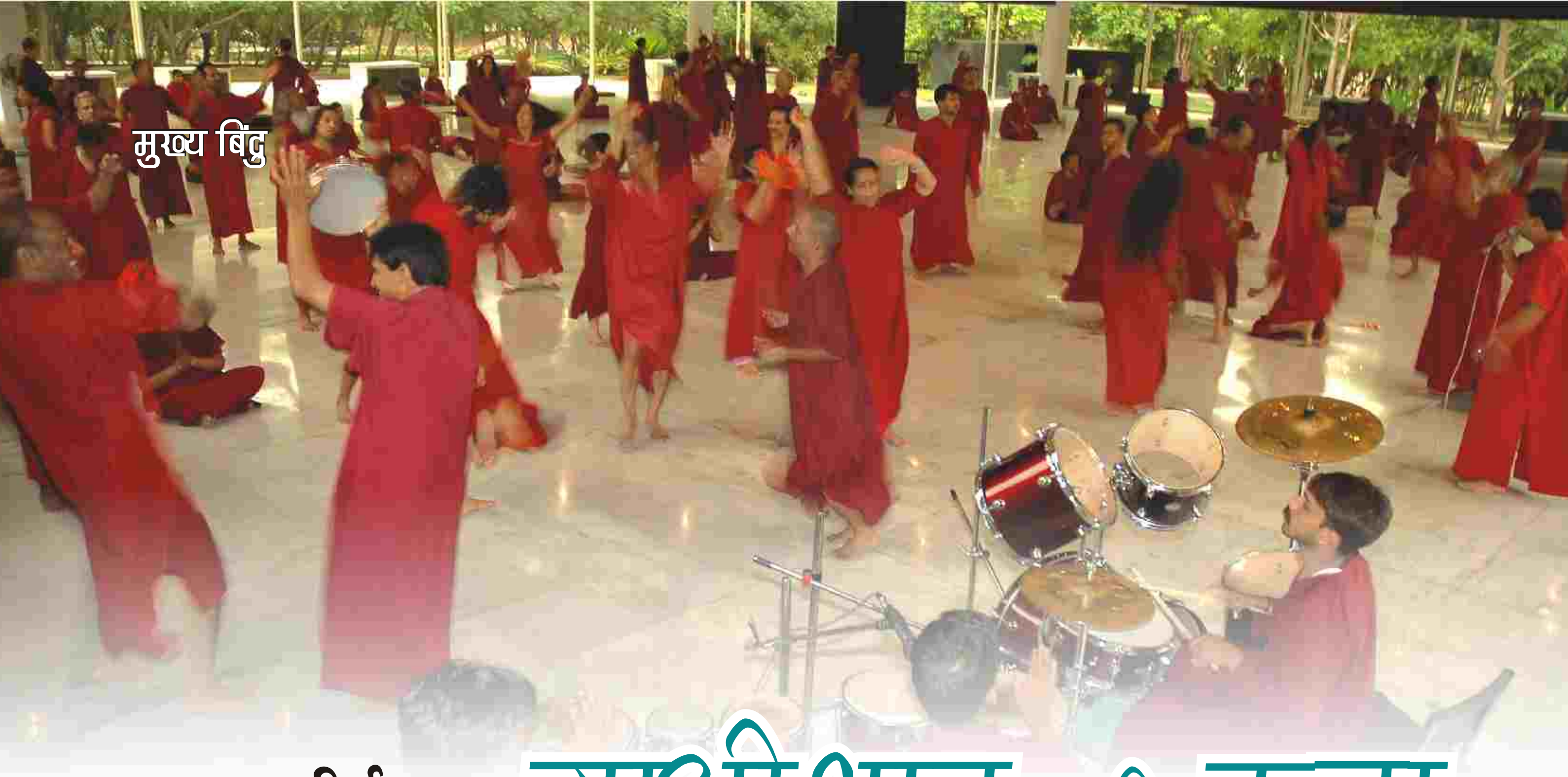

नृत्य-कीर्तन : साक्षीभाव की कला

एक दूसरे मित्र ने पूछा है कि कीर्तन के समय हम अपने मन के सामने कौन-सी छवि रखें, जिससे मन केंद्रित हो जाए?

मन को केंद्रित नहीं करना है, मन को विसर्जित करना है। इन दोनों में फर्क है। मन केंद्रित भी हो जाए, तो भी मन रहेगा। कोई छवि मन में बना ली, तो छवि पर मन केंद्रित हो जाएगा। लेकिन छवि रहेगी, मन भी रहेगा। दो बने रहेंगे।

कीर्तन का अंतिम लक्ष्य, ध्यान का अंतिम लक्ष्य, प्रार्थना का, पूजा का अंतिम लक्ष्य—एक बच रहे, छवि कोई न रहे।

तो जब आप कीर्तन कर रहे हैं, तो छवि की फिक्र न करें। छवि आ जाए, तो हटाने की भी फिक्र न करें। छवि न आए, तो लाने की भी फिक्र न करें। आप तो सिर्फ लीन होने की, डूबने की फिक्र करें। मिटने की फिक्र करें।

जब आप एकाग्र करने की चेष्टा करते हैं, तो मन पर तनाव पड़ता है। तनाव बेचैनी पैदा करेगा। एकाग्र करने की चेष्टा ही मत करें। खोने की चेष्टा करें। जैसे बूंद सागर में डूब रही है, ऐसे आप विराट में डूब रहे हैं, निराकार में खो रहे हैं। जैसे दीए को कोई फूंककर बुझा दे और वह खो जाए शून्य में, ऐसे आप भी खो रहे हैं। लीन होने की चिंता करें, डूबने की चिंता करें, मिटने की चिंता करें। एकाग्र करने की चेष्टा मत करें, विसर्जित होने की, मेल्टिंग, जैसे बर्फ पिघल रही है।

एक खयाल कर लें, जैसे बर्फ हो गए आप और पिघल रहे हैं, और बहते जा रहे हैं, और नदी में लीन होते जा रहे हैं। पिघलने की, खोने की, डूबने की! अगर आपके कीर्तन में यह भाव-दशा बनी रहे, धीरे-धीरे नृत्य गहन होने लगेगा, धीरे-धीरे आवाज प्रगाढ़ होने लगेगी। और धीरे-धीरे नृत्य के साथ आपके भीतर बहुत कुछ टूटने लगेगा, समाप्त होने लगेगा। वह जो अहंकार था, वह गिरने लगेगा। कोई क्या कहेगा! कोई क्या सोचेगा! मैं क्या पागलपन कर रहा हूं! वह सब समाप्त होने लगेगा। धीरे-धीरे-धीरे आप भूल जाएंगे कि आप हैं, भूल जाएंगे कि जगत है। और जब यह विस्मरण का क्षण आ जाए कि न समझ में आए कि मैं कौन हूं, न समझ में आए कि चारों तरफ कौन है, तो समझना कि यह स्मृति की शुरुआत हुई।

इस विस्मरण में, जगत की तरफ से इस विस्मरण में भीतर का स्मरण आना शुरू हो जाता है। जब जगत भूलने लगता है, तो परमात्मा याद आने लगता है। परमात्मा के याद आने का मतलब यह नहीं है कि कोई छवि याद आने लगती है। परमात्मा के याद आने का मतलब यह है कि वह जो जिसको विलियम जेम्स ने ओशनिक फीलिंग कहा है, समुद्र होने की भाव-दशा। बूंद होने का भाव नहीं, समुद्र होने का भाव आने लगता है।

फिर आप विराट हो जाते हैं। और फिर हवाएं चलती हैं, तो ऐसा नहीं कि आपके बाहर चल रही हैं, आपके भीतर चलती हैं। वृक्ष हिलते हैं, तो आपके बाहर नहीं, आपके भीतर हिलते हैं। चांद-तारे आपके भीतर चलते हैं। आपके आस-पास जो लोग नाच रहे हैं और कीर्तन कर रहे हैं, वे भी आपके बाहर नहीं रह जाते, आपके भीतर प्रवेश हो जाते हैं। आप फैलकर बड़े हो जाते हैं। और आपके भीतर सब होने लगता है।

छवि की बहुत फिक्र न करें। आ जाए, तो हटाने की भी चेष्टा मत करें। क्योंकि हटाने में भी फिर चेष्टा शुरू हो जाती है। आ जाए तो राजी, न आए तो राजी। अगर आप किसी छवि को प्रेम करते रहे हैं, तो वह आ जाएगी। अगर कृष्ण से आपका लगाव है, तो जब आप मस्त होंगे तो पहली घटना यही घटेगी कि कृष्ण आपको दिखाई पड़ने लगेंगे। अगर आपका क्राइस्ट से प्रेम है,

तो आप मस्त होते से, पहली घटना, क्राइस्ट के पास आप पहुंच जाएंगे।

मजे से उनको रहने दें। उनको हटाने की भी कोई जरूरत नहीं है। धीरे-धीरे वे भी खो जाएंगे। और जब वे भी खो जाएंगे, तब निराकार प्रकट होता है। जहां राम भी खो जाते हैं, कृष्ण भी खो जाते हैं, बुद्ध भी खो जाते हैं, क्राइस्ट भी..। क्योंकि वे हमारे अंतिम पड़ाव हैं।

इसे ठीक से समझ लें।

जहां संसार समाप्त होता है, वहां खड़े हैं क्राइस्ट, बुद्ध, कृष्ण। उनकी प्रतिमाएं आखिरी तख्ती है, जहां संसार समाप्त होता है; वहां वे खड़े हैं। जब उनका भाव आता है, तो उसका अर्थ है कि अब हम किनारे आ गए। लेकिन उन तख्तियों को पकड़कर रुक नहीं जाना है। देखते रहना है, और आगे, और आगे, और आगे, जहां वे भी खो जाएंगे, वहां लीन हो जाना है। देखते-देखते, आनंद-से, धीरे-धीरे सब छोड़ देना है।

यह छोड़ने की घटना शरीर को छोड़ने से शुरू होती है। कीर्तन की यही मौज और आनंद है कि आप शरीर को छोड़ दिए हैं।

लोग मुझसे पूछते हैं कि कोई व्यवस्था होनी चाहिए कोई ढंग से नृत्य, कोई ताल, लय, यह सब व्यवस्था होनी चाहिए! व्यवस्था से कीर्तन का कोई संबंध नहीं है। सच तो यह है कि कीर्तन व्यवस्था तोड़ने का एक उपाय है। कि आपके भीतर अब कोई व्यवस्था करने की चेष्टा नहीं है। आपने छोड़ दिया शरीर को, जैसा जो हो रहा है, आप होने दे रहे हैं। अब आप बीच-बीच में नहीं आ रहे हैं कि कैसे पैर उठाऊं। अब जो हो रहा है, होने दे रहे हैं।

और यह छोड़ना शरीर का, पहला अनुभव है विसर्जन का। फिर मन को भी छोड़ देना है। जो हो रहा है, होने देना है। धीरे-धीरे शरीर और मन अपने आप गति करने लगेंगे और आप सिर्फ साक्षी रह जाएंगे, अपने ही मन के।

मैं पढ़ रहा था, रूसी अंतरिक्ष यात्री पैकोव जब पहली दफा छत्तीस घंटे जमीन की परिधि में परिक्रमा किया, तो उसने अपने संस्मरण लिखे लौटकर। उसने अपनी डायरी में लिखा है..। क्योंकि जैसे ही जमीन का गुरुत्वाकर्षण समाप्त होता है, तो हाथ-पैर निर्भार हो जाते हैं, वेटलेस हो जाते हैं। अंतरिक्ष में कोई वजन तो नहीं है। वजन तो आप में भी नहीं है। जमीन की कशिश की वजह से वजन मालूम पड़ता है। दो सौ मील जमीन के पार जाने के बाद से वजन मालूम पड़ता है। दो सौ मील जमीन के पार जाने के बाद वजन समाप्त हो जाता है, आप निर्भार हो जाते हैं।

तो पैकोव ने लिखा है कि जब मैं सोने लगा, तो बड़ी मुसीबत मालूम पड़ी। क्योंकि मेरा पूरा शरीर तो बेल्ट से बंधा था, लेकिन मेरे दोनों हाथ ऐसे अधर में लटक जाते थे। तो मैं उनको खींचकर नीचे कर लेता। खींचकर नीचे कर लेता तब तो ठीक, लेकिन जैसे ही झपकी आनी शुरू होती, मेरा खिंचाव बंद हो जाता, हाथ दोनों फिर अधर में लटक जाते! तो उसने लिखा है कि बीच आधी रात में नींद खुली, अपने दोनों हाथ ऐसे लटके हुए देखकर मुझे पहली दफे साक्षी-भाव हुआ, कि मेरा शरीर अपना ही शरीर, अपने ही बस के बाहर ऐसा अधर में लटका हुआ है!

कीर्तन की गहराई में जब शरीर को आप बिलकुल छोड़ देते हैं उन्मुक्त, और जो होता है, होने देते हैं, तत्क्षण आपको भीतर लगता है कि मैं शरीर से अलग हूं। अब शरीर अपनी गति से चल रहा है। शरीर अपनी गति कर रहा है और मैं देख रहा हूं। जैसा पैकोव को हुआ होगा, ऐसा कीर्तन में आपको सहज ही हो सकता है।

और बड़े मजे की बात है कि आज नहीं कल अंतरिक्ष-यात्रा को हम आत्म-साधना के लिए उपयोग में ला सकेंगे। और अतीत में साधकों को जो काम वर्षों तक करके हल होता था, वह अंतरिक्ष में साधक को घंटों में भी हो जा सकता है। क्योंकि जमीन पर रहकर मैं शरीर नहीं हूं, इस भाव का अनुभव करने में वर्षों लग जाते हैं, क्योंकि जमीन पूरे वक्त खयाल दिलाती है कि तुम शरीर हो।

इसलिए हमारा साधक हिमालय के पहाड़ पर दूर, उतना ऊंचाई पर। जितना ऊंचाई पर जाता था, जमीन से जितना दूर, उतना निर्भार होना आसान हो जाता था। इसलिए हमने कैलाश खोजा था। लेकिन अब कैलाश छोटी-मोटी जगह है। अब हम अंतरिक्ष में, जमीन को बिलकुल छोड़ सकते हैं। और जब अंतरिक्ष यान में किसी साधक का शरीर हवा में ऐसे उड़ रहा है, जैसे कि गुब्बारा गैस का भरा हुआ हवा में होता है, तब यह अनुभव करना बिलकुल आसान होगा कि मैं शरीर नहीं हूं।

कीर्तन आपको निर्भार कर जाता है, शरीर को आप छोड़ देते हैं, बच्चे की तरह। कभी-कभी तो नृत्य बड़ा क्रांतिकारी काम कर देता है।

सूफियों में दरवेश नृत्य की व्यवस्था है। दरवेश नृत्य वैसा होता है, जैसे बच्चे चक्कर लगाते हैं, एक ही जगह खड़े होकर फिरकनी करते हैं। तो दरवेश नृत्य में एक ही जगह खड़े होकर फिरकनी की तरह चक्कर लगाया जाता है, व्हिरलिंग। जब आप जोर से एक ही जगह खड़े होकर चक्कर लगाते हैं, सिर घूमने लगता है, चक्कर मालूम होता है। लगता है, गिर जाऊंगा, गिर जाऊंगा। लेकिन अगर आप गिरें न और लगाए चले जाएं, तो थोड़ी ही देर में आपको पता लगेगा कि शरीर चक्कर लगा रहा है और आप खड़े हो गए।

छोटे बच्चों को बहुत मजा आता है। मां-बाप रोकते हैं कि मत करो, चक्कर आ जाएगा। मत रोकना। क्योंकि छोटे बच्चों को जो मजा आता है फिरकनी मारने में, वह मजा थोड़े से आत्मा के सुख का ही है। क्योंकि फिरकनी मारने में उनको लगता है कि मैं शरीर नहीं हूं। शरीर घूमने लगता है यंत्र की तरह, और बीच में वे खड़े हो जाते हैं। बच्चे निर्दोष हैं, उनको यह जल्दी हो जाता है।

नृत्य भी आपको बचपन में ले जाना है। कीर्तन आपको बच्चे की तरह सरल कर देना है। जो हो रहा है, होने देना है। और भीतर सजग शांत देखते रहना है। यह साक्षी-भाव बना रहे और अपने को विसर्जित करने की धारणा बनी रहे, तो आपका कीर्तन सफल हो जाता है।

— ओशो

गीता दर्शन, पांचवां भाग

ग्यारहवां अध्याय, नौवां प्रवचन

(पूरा प्रवचन टेप पर भी उपलब्ध है)